P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* (Part-2) April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

कान्हड़दे प्रबंध में वर्णित सामाजिक जीवन

वगता राम चौधरी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
श्री राजेन्द्र सूरि कुन्दन जैन
राजकीय महिला महाविद्यालय,
जालोर, राजस्थान, भारत

सारांश

पश्चिमी राजस्थान में जालोर एवं भीनमाल साहित्य रचना की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। साहित्य की दृष्टि से यहां की भूमि बहुत उर्वर रही है। वैदिक ऋषियों ने यहां ऋचाओं का आह्वान किया तो ब्रह्मगुप्त, उद्योतन सूरि, सिद्धर्षि पदमानाथ जैसे कवियों ने इस भूमि पर साहित्य साधना कर इस क्षेत्र को समृद्ध बनाया। कवि पद्मनाभ जालोर के ऐतिहासिक सोनगरा चौहान शासक अखेराज/अखयराज के आश्रित कवि थे। जालोर के प्रसिद्ध शासक कान्हडदे (1296 ई. 1311 ई.) के पांच पीढी बाद (लगभग 150 वर्ष) हुए।

मुख्य शब्द :

प्रस्तावना

कवि पद्मनाभ ने अपने ग्रंथ कान्हडदे प्रबंध की रचना तिथि मार्गशीर्ष शुक्ला पूर्णिमा सोमवार, संवत 1512 (1455ई.) लिखी है–

पंचतालीसउ पूठि वरीस, मास मगसिर पूनिम दीस।
संवत पंनर बारोतरउ, तिणि दिनि सोमवार विस्तरू ।। [1]

कान्हड़दे प्रबंध में कवि ने मध्यकाल में जालोर के चौहान शासक कान्हड़दे पर अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण का विस्तृत वर्णन किया है। कवि ने समकालीन एवं सांस्कृतिक तथ्यों का वर्णन कर यहा! की समृद्ध संस्कृति की पुष्टि की है। कान्हड़दे प्रबंध में कवि ने यत्र–तत्र खान–पान, वेशभूषा एवं आभूषण, नैतिक मूल्य, पारिवारिक जीवन, सती प्रथा, एवं जौहर, विवाह आदि पर प्रकाश डाला है।

मध्यकाल में राजपूत, ब्राह्मण और महाजनों के अलावा गांछा, छींपा, माली, तेली, तम्बोली, नाई, धोबी, कारू–नारू आदि जातियों का भी उल्लेख मिलता है–

गण गायण नइ नगर नाइका, गांछा छीपा माली ।
करइ जुहार मगावइ आयस, तेली नइ तंबोली ।।
कारू नारू नइ विवसाई, आवइ वर्ण अढार ।
पाए लागीनइ कामा सारइ, आयस करइ जुहार।। [2]

जालोर क्षेत्र के मध्यकालीन सामाजिक जीवन चौहान शासकों के मूल्यों से प्रभावित रहा। कवि पद्मनाभ ने तत्कालीन समाज का भी वर्णन किया है। उस समय समाज में 18 वर्णो के लोग रहते थे। प्रत्येक वर्ग का कार्य निश्चित था। कवि ने सैन्य दल का वर्णन किया है, जिससे तत्कालीन मध्यकालीन समाज की जातियों के बारे में जानकारी मिलती है–

भोई मेहर अनइ ठाठीया, चालइ काहर कमाणी।
च्यारि सहस साथइ सांचरीया वहइ पषांली पाणी।।
त्रीस सहस कटकीया वाणीया साथइ वस्तु चलावइ ।
गाडे चडी चालती घाणी घांची षेडत आवइ ।।
मोची गांछा नइ सतूआरा, साथइ चालइ माली।
दरजी बाबर ऊड चालीया, च्यारि सहस तंबोली।।
बगनीघडा कावडि चालइ, भाठी वहइ शमार।
पांच सहस चालइ भठीयारा, घाटघडा लोहार।।

सवे सिलावट सांचरइ साथि, छोह–वहइ चूनारा।।
चालइ वुहरा कागलकूटा, हीर तणा तूनारा।।
लाश बियारि वाणिजू चालइ, बार लाश उलगाणा।
करकटीया हबसी भाथाइत, फरसीधर सपराणा।। [3]

उस समय समाज में भोई, मेहर, ठाठिया, कहार, कमाणी (धनुष बनाने वाले), पखाली (पानी भरने वाले), बनिया, मोची, सुथार, दर्जी, कावडिया, कुम्हार, भटियार (भोजन बनाने वाले), लुहार, चूनारा (चूने के काम करने वाले), घाटघड़ (बर्तन बनाने वाले), सीतवतस (पत्थर काटने वाले), बोहरा (पैसा उधार देने वाले), कागलकुता (कागज बनाने वाले), तुनारा (रेशमी कपड़ा बनाने वाले), बंजारा आदि जातियों का उल्लेख कवि ने सुल्तान के सैन्य दल में किया है।

खानपान

मध्यकालीन समाज के बारे में खान–पान की जानकारी का महत्वपूर्ण स्रोत कान्हड़दे प्रबन्ध है। कवि पद्मनाभ ने यत्र–तत्र खान पान का भी विवरण दिया है। हालांकि यहाँ! खान–पान की जानकारी केवल उच्च वर्ण के बारे में है, परन्तु उस समय तत्कालीन समाज पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। खाद्य पदार्थो में सूखे कच्चे खजूर, दाख, कच्चे नारियल, सुपारी, खजूर, गन्ने और वनफूल सुन्दर बगीचों में उगे हुए थे। अदरक, जमीकंद, बटालू आदि पौष्टिक पेय थे, जिनको खाने के बाद अन्न खाने की भी इच्छा नहीं होती थी। यथा–

शारिक द्राष नालीयर नीलां, फोफल अनइ शिजूरां।
वारू वाड सेलडी केरा, वाडीनां केलिहरां ।।
आदां सूरण नई पींडालू, वली पोसातां पान।
कटक मांहि जु ताशति आवइ, कोट न शाइ धान।।[4]

राजकुमारी द्वारा अपने पिता सुल्तान अलाउद्दीन को दी गई जालोर की विस्तृत जानकारी में यहां के शाकाहारी भोजन का वर्णन मिलता है। कवि ने लिखा है कि भोजन के समय त्राट लगाये जाते थे, जब वीर भोजन करते है तो चारण और भाट उनका यशोगान करते है और व्यंजन परोसे जाते है–

रंगि बिरंगां मुहगां मूलि, पहिरइ एक कणयरी झूलि।
भोजन वार मांडीइ त्राट, कीरति बोलई चारण भाट।।
सेव सूहांली लाडू गल्या, आछा मांडा पापड तल्या।
शाजे शडक सालणे वडी, कूरकपूर तली पापडी ।।
पंचधार लापसी कंसार, धान रसोई भाव अढार।
अति ऊजलां ढेपालां दही, भुंजाई ए राउल लही।।
पान कपूर दीइ थईआत, चोआ सुर तुर चोलीइ हाथ।
मुडोधानी कुंअरी घणी, अंतेउरी कान्हड़दे तणी।। [5]

यथा – सेव, सुहाली, लडडू, मांडा, तले हुए पापड़, विभिन्न प्रकार की मिठाईयां, सूखी सब्जियां, वडी, चावल, कपूर, तली हुई पापड़ी, पंचधार मिठाई, लापसी, कंसार, कई प्रकार के चावलों के व्यंजन और उज्ज्वल अति गाढ़ा मलाईदार दही। इसी तरह के व्यंजन रावल के महल में परोसे जाते थे। भोजन के बाद सेवक पान परोसते थे और अपने हाथों में लाई गई कचौली से इत्र लगाते थे।

कवि पद्भनाभ ने सैन्य अभियान के दौरान की गई भोज्य सामग्री की व्यवस्था के बारे में भी प्रकाश डाला है जिससे उस समय की कई वस्तुओं की जानकारी उपलब्ध होती है–

लाष लाष साहणनी वाट, दस दस सहस दीवाणी हाट।
लाभइ चाउल मूंग नइ लूण, आटा गुल घी षाइ कूण।।
लाभइ षांड तेल नइ मिरी, करइ सालणां लाभइ सुरी।
अजमा जीरां लाभइ बहू, वेसण विरहाली लह सहू।।
लाभइ नवी तिलीनइ विही, कोठीबड़ां तणी काचरी।
आदां सूरण केलां हुआं, बीजोरां दाड़िम लींबूआं ।।
लाभइ षारिक फोफल द्राष, वली नालीयर लाभइ लाष।
लाभइ साबू नइ कंटोल, हाटि हाटि छइ निरतां तोल।।
गांधी हाटि पामीइ पुडी, रोग न आवइ एकइ घडी।
साथि आवइ घोडानी लास, कटक मांहि मांडीइ निषास।।[6]

इनसे यह प्रतीत होता है कि ये खाद्य पदार्थ उस समय प्रचलन में थे।

वेशभूषा एवं आभूषण

यहां के मध्यकालीन समाज की वेशभूषा भी राजस्थान के अन्य भागों की भांति रही। कवि पद्मनाभ ने अपने ग्रन्थ में कई जगह इसका वर्णन है। हार, बाजूबंद, रखड़ी आदि पहने जाते थे। मस्तक पर कुमकुम के तिलक लगाये जाते थे।

बाजार में उपलब्ध वस्तुओं की भी जानकारी उस समय मिलती है। अच्छे खेरा, गहरा लाल मजीठा, रेशमी पाटसूत्र, कशीदा युक्त शॉल, जोगी, गेरूआं रंग के वस्त्र धारण करने का वर्णन यहां पर स्थित नाथ पंथ की ओर इंगित करता है। जालोर में नाथ सम्प्रदाय की प्रमुख पीठ है जो मध्यकालीन है, लेखक के समय यहां पर नाथ सम्प्रदाय का अच्छा प्रभाव रहा होगा।

नैतिक मूल्य

मध्यकालीन जालोर के जनसाधारण के बारे में कान्हड़दे प्रबन्ध से नैतिक मूल्यों की जानकारी भी मिली है। उस समय समाज कर्म में विश्वास करता था तथा भाग्यवादी एवं पाप–पुण्य के विचार से पूर्णतया परिचित था।

क्षत्रिय धर्म या एक राजपूत शासक का यह नैतिक कर्तव्य था कि वह अपनी प्रजा के धर्म एवं संस्कृति की रक्षा करें। उसका यह भी कर्तव्य था कि स्त्रियों, गायों एवं ब्राह्मणों को संरक्षण प्रदान करें तथा आक्रमण के समय बंदी बनाये गए सैनिकों को यातना से मुक्ति दिलवाये। इसलिए कान्हडदेव ने ब्राह्मणों एवं युद्धबंदियों की रक्षा के लिए भीनमाल में युद्ध किया था। [7]

जन साधारण कर्म में विश्वास करता था तथा भाग्यवादी एवं पाप पुण्य के विचार से पूर्णतया परिचित था। झूठी गवाही नहीं देना, झूठे लांछन नहीं लगाना, दूधपीते बच्चों को मां से दूर नहीं करना, गोचर भूमि में खेती नहीं करना, किसी की सम्पति को नहीं हड़पना, वृक्षों पर से मधुमक्खी के छतों को नहीं तोड़ना। शहद इकट्ठा करना, अवसर पर दान नहीं देना, खड़ी फसल में से रास्ता निकालना, कुल मर्यादा का लोप करना, घास की गंजियों में आग लगाना, अतिथि का अपमान करना, प्यासे को पानी नहीं पिलाना, परस्त्री गमन करना, स्वयं की संतान में भेद करना, सरोवर की पाल तोड़ना, पेड़ काटना, देव मंदिर गिराना, नमक, लाख व तिल आदि का व्यापार करना, कन्या विक्रय करना, विश्वासघात करना, दूसरे के

अन्न पर गुजारा करना, सुरापान करना, कुसंगति करना, जीवदया का पालन नहीं करना, लोगों की अमानत हड़प जाना, किसी को गुप्त रूप से विष देना, वचन एवं विश्वास देकर उसको भंग करना, गरीबों के प्रति दया नहीं करना, अनुचित तरीके से रिश्वत लेना आदि सभी महापापों की श्रेणी में आते थे। [8]

इस प्रकार शासक अपनी प्रजा के प्रति कर्तव्यों का निर्वाह कर जन साधारण का विश्वास प्राप्त करता था। शासक एवं प्रजा में सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध राजस्थान के सामंतवादी समाज में लम्बे समय तक शान्ति एवं व्यवस्था बनाये रखने में सक्षम हो सके। जनसाधारण शासक की ओर कृतज्ञ था और उसके प्रति पूर्णरूपेण समर्पित था। शासक जातीय प्रथा को बनाकर सामाजिक जीवन को सुव्यवस्थित ढंग से नियंत्रित करता था।

पारिवारिक जीवन

भारतीय संस्कृति में संयुक्त परिवार प्रथा का बड़ा महत्व रहा है। इसीलिए यहां माता, पिता, पुत्र, पुत्री, पति, पत्नी, भाई, बहिन आदि का अत्यन्त महत्व माना गया है। परिवार के सभी सदस्य साथ रहते हैं और एक–दूसरे के साथ प्रेम व सद्भावपूर्ण व्यवहार करते है। यही कारण है कि राजा कान्हड़दे अपने लघु भ्राता मालदेव और अपने पुत्र कुंअर वीरमदे से बहुत प्रीति करता था।

भारतीय परिवारों में पति–पत्नी का अटूट संबंध माना जाता है। एक पत्नी अपने पति के बिना नहीं रह पाती है और वह इस संबंध को जन्म–जन्मांतर का संबंध मानती है। यही कारण है कि राजकुमारी खुंजा लाडण (फिरोजा) कुंअर वीरमदे को अपने पूर्व जन्मों के कारण ही, इस जन्म में भी अपना पति स्वीकार करती है और जब उसके पिता बादशाह अलाउद्दीन, उससे पूछते है कि वीरमदे तुम्हारा पति कैसे हो सकता है, तो वह पिछले छः जन्मों की घटनाओं का पूर्ण वृतांत अपने पिता को बतलाती है।

भारतीय परिवारों में माता–पिता की आज्ञा मानने को बहुत महत्व दिया जाता है, इसीलिए पद्मनाभ ने लिखा है कि जब हिन्दू बंदी तुर्की शिविरों में अपने पापकर्मों को याद करते है, तो वे कहते है कि क्या हमने अपने माता–पिता की आज्ञा का पालन नहीं किया था ?

भारत के राजवंशी परिवारों की यह विशेषता रही है कि पिता की मृत्यु के पश्चात ज्येष्ठ पुत्र को ही उत्तराधिकारी बनाया जाता था। पद्मनाभ ने कान्हड़दे के वीरगति को प्राप्त कर लेने के पश्चात उसके पुत्र कुंवर वीरमदे के राज्याभिषेक किए जाने का निरूपण करके भारतीय संस्कृति की उक्त मान्यता का सजीव रूप प्रस्तुत किया है।

सतीप्रथा एवं जौहर

कान्हड़दे प्रबन्ध से हमें मध्यकालीन राजस्थान में सतीप्रथा [9] एवं जौहर [10] के बारे में जानकारी मिलती है। पदभनाभ लिखता है कि राजपूत महिलाओं का अग्नि प्रवेश होना सती धर्म समझा जाता था, क्योंकि इससे उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होती थी। वर्तमान में यह विचार काल्पनिक एवं त्रुटिपूर्ण समझा जाता है।

कान्हड़दे की अनेक रानियां थी, जिन्होंने अपने आपको दुश्मन के हाथों से बचाने के लिए अपनी दासियों एवं परिचारिकाओं के साथ सामूहिक जौहर किया था। यह जौहर वास्तव में एक युद्ध की सामरिक नीति थी। कवि पद्मनाभ ने जालोर किले एवं नगर के प्रत्येक घर में होने वाले जौहर का रोचक वर्णन किया है।

कवि ने न केवल राजपूत स्त्रियों बल्कि आम जनता (सभी जाति) की स्त्रियों द्वारा जौहर करना भी लिखा है।[11] इससे यह बात सिद्ध होती है कि जौहर न केवल राजपूत जाति की स्त्रियों द्वारा किया जाता था, बल्कि अन्य जातियों की स्त्रियां भी संकट के समय जौहराग्नि में प्रवेश करती थी। कवि पद्मनाभ ने जालोर गढ में जौहर के समय एक हजार पांच सौ चौरासी स्त्रियों द्वारा जौहर करना लिखा हैं।

विवाह

भारतीय समाज मे विवाह नामक सामाजिक संस्था के अस्तित्व का उल्लेख अत्यन्त प्राचीन काल से मिलता है। इस संबंध में ऋग्वेद में भी वर्णन उपलब्ध है। वस्तुतः जब मनुष्य जाति ने सभ्यता की ओर अपने चरण बढ़ाए तो वैवाहिक–संबंधों के परिष्कार की ओर ध्यान देना शुरू किया।

प्रारम्भ में मनुष्य अपने ही कुटुम्ब में यौन–सम्बन्ध स्थापित कर लेता था, किन्तु धीरे–धीरे इस प्रकार के संबंधों को उसने अनुचित समझते हुए, अपने कुटुम्ब को बचाकर दूसरे कुटुंब से यौन सम्बन्ध स्थापित करने शुरू कर दिए और यहीं से 'विवाह संस्था' का प्रारम्भ हुआ।

ऋग्वेद काल से ही भारतीय समाज में भाई–बहिन विवाह संबंधों पर प्रतिबन्ध का वर्णन मिलता है। ऋग्वेद के यम–यमी संवाद के अनुसार यमी अपने भाई यम से विवाह का प्रस्ताव करती है, किन्तु यम देव नियमों की ओर संकेत करके उसके विवाह–प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करता है। अतः स्पष्ट है कि ऋग्वेद कालीन संस्कृति वैवाहिक संबंधों की दृष्टि से उन्नत संस्कृति थी।

भारतीय संस्कृति में विवाह संस्था को विशेष महत्व दिया गया है। यहां वधु अपना सर्वस्व अपने पति के लिए न्यौछावर कर देती है, उसका अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रहता, वह अपने पति की अर्धांगिनी बन जाती है और पति को अपने इहलोक और परलोक का स्वामी समझकर एवं पति परायणा होकर सदैव जीवन व्यतीत करती है। भारतीय जीवन में विवाह एक ठेका नहीं है, अपितु वह एक ऐसा पवित्र बंधन माना गया है, जो पति के दुराचारी या अत्याचारी होने पर भी नहीं टूटता, अपितु जिसका संबंध जन्म–जन्मांतर से होता हैं।

निष्कर्ष

'कान्हड़दे प्रबंध' में पद्मनाभ ने विवाह संस्था का सुन्दर विवेचन किया है। कवि ने विवाह समारोह के अवसर पर होने वाले रीति–रिवाजों यथा बारात ले जाना, चंवरी (चतुरिका) में बैठना, हथलेवा–संस्कार में वधू का हाथ पकड़ना, विवाह–मंडप में भोजन ग्रहण करना आदि का निरूपण करते हुए लिखा है–

नवि देस्युं वेवाही मान, नही आवइ तुरकांणइ जान।
मेरू सिषर जउ त्रूटी पडइ, चाहूआण चउरी नवि चडइ।।
हाथेवालइ हाथ नवि धरूं, नही बइसूं जिमन माहिरूं। [12]

चाहूआणनउं कुल निकलंक, जिस्यउ पूनिम तणउ मयंक।।

इस प्रकार पद्मनाभ ने विवाह संस्था की महत्ता को स्वीकार करते हुए उसका सफल विवेचन किया है।

अंत टिप्पणी

1. *कान्डदेव प्रबंध प्रकाशक राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर 1997, श्लोक 343 चतुर्थ खण्ड, पृ. 232*
2. *पूर्वोक्त चतुर्थ खण्ड श्लोक 233, 234*
3. *पूर्वोक्त द्वितीय खण्ड श्लोक 87, 92*
4. *पूर्वोक्त प्रथम खण्ड श्लोक 75, 76*
5. *पूर्वोक्त चतुर्थ खण्ड श्लोक 49–52*
6. *पूर्वोक्त चतुर्थ खण्ड श्लोक 75–79*
7. *रसीलेराज, वर्ष 6, अंक 7–8 महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केन्द्र जोधपुर 2011*
8. *गौड़, डॉ. ऋचा कान्हडदे प्रबन्ध में संस्कृति और समाज बीकानेर 2009, पृ. 216–217*
9. *कान्डदेव प्रबंध प्रकाशक राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर 1997, द्वितीय खण्ड, श्लोक 151–152*
10. *पूर्वोक्त चतुर्थ खण्ड श्लोक 239, 240*
11. *पूर्वोक्त चतुर्थ खण्ड श्लोक 243*
12. *पूर्वोक्त तृतीय खण्ड श्लोक 133, 134*